दियांका टॉमचिक

ओ. पेरोव्स्काया

सर्वाधिकार सुरक्षित

मूल्य : 20.00 ।

प्रथम संस्करण : जनवरी 2008
पुनर्मुद्रण : जनवरी 2010

प्रकाशक

अनुराग ट्रस्ट

डी-68, निरालानगर
लखनऊ-226020

लेज़र टाइप सेटिंग : कम्प्यूटर प्रभाग, राहुल फ़ाउण्डेशन
मुद्रक : क्रिएटिव प्रिण्टर्स, 628/एस-28, शक्तिनगर, लखनऊ

दियांका-टॉमचिक

लेखक

मध्य एशिया में दो बड़ी नदियों के बीच एक उर्वर फलता-फूलता पहाड़ है कजाख-इर दिजेनी शू। जिसका मतलब है सात नदियाँ। इन सात नदियों के किनारे पहाड़ है, जंगल है, हरी-भरी घाटियाँ हैं और बाग हैं। यह शहर, अपने बड़े सेबों के लिए खासकर जाना जाता है। यह आल्म-अता है, जिसका मतलब है "सेबों का पिता"।

'सेबों का पिता' समृद्ध व्यजंक रिपब्लिक की राजधानी है। यह एक बड़ा सांस्कृतिक और औद्योगिक केन्द्र तुर्चशीन रेलमार्ग, इसे सोवियत संघ के बाकी बड़े शहरों से जोड़ता है। मास्को के दूर-दराज़ के इलाकों से नियमित रूप से रेलगाड़ियाँ अल्मा-अता के भव्य रेलवे स्टेशन पर आकर लगती हैं।

शहर की विभिन्न अकादमी, संस्थान, थिएटर और सिनेमा घरों के भवन सूरज की रोशनी में पर्वत पर जमें सफेद हिम की तरह चमकते हैं। वहीं शहर के पीछे शानदार भव्य पर्वत शान से खड़ा है।

शहर की चौड़ी सड़कों पर अन्तहीन कतार में ट्रॉम, ट्रक, ट्रॉली बसें और मोटर-गाड़ियाँ दौड़ती रहती हैं। धूप से काली पड़ गई त्वचा लिए और अच्छे कपड़े पहने पर्यटक शहर के चारों तरफ के बागों और पहाड़ के रेसार्टों को देखने जाते हैं। ये उन पर्यटन स्थलों को दिखाने वाली बसों में सवार होते रहते हैं।

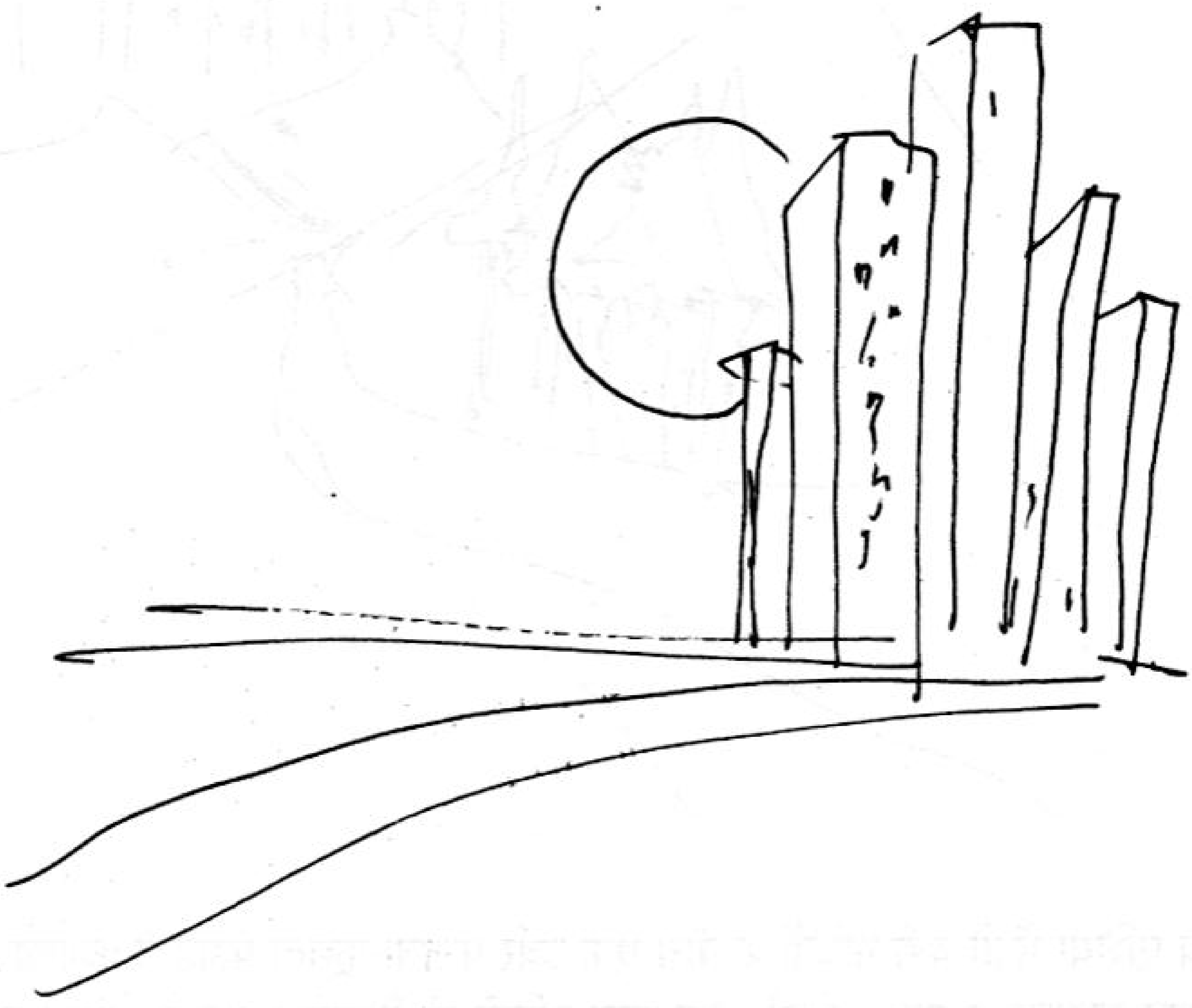

इस प्रकार किसी समय का पिछड़ा, सुस्त जीवन वाला प्रान्त, अल्मा-अता अब बदल गया है जैसा मैं इसे अपने बचपन में जाना करती थी वैसा अब यहाँ कुछ भी नहीं।

जब मैं बच्ची थी तब अल्मा-अता से सबसे करीबी रेलवे स्टेशन 400 मील दूर था। यहाँ की आबादी बहुत कम थी। अगर साल भर में एक भी मोटरगाड़ी इसकी गलियों में नज़र आती तो सभी लोग चाहे वे जो कुछ भी कर रहे होते छोड़कर इस पहिये के ऊपर दौड़ रहे चमत्कार को देखने दौड़ पड़ते थे।

उन दिनों सभी घर एक मंजिले ही होते थे। वे पेड़ों पर उग आए कुकुरमुत्ते की तरह लगते थे।

हम एक छोटे घर में रहते थे। हमारा एक बड़ा बागीचा था। बागीचे में सेब के कई पेड़ थे, लेकिन इन सबसे महत्वपूर्ण था वहाँ के जंगली और घरेलू दोनों ही किस्म के कई पालतू जानवर जो हमारे साथ ही बड़े हो रहे थे।

जितनी बार पिताजी शिकार पर जाते, अपने साथ जानवर का जिन्दा बच्चा ले आते। हम उन्हें खिलाते, उनकी देख-भाल करते और खुद ही उनका ख्याल भी रखते थे।

हम सभी का अपना-अपना खास पालतू जानवर था—एक के पास लोमड़ी का सदा मस्त रहने वाला बच्चा था, दूसरे के पास गधे का बच्चा था और मेरी सबसे छोटी बहन के पास गुएना-सुअर था।

मेरे पिता ने मुझसे वादा किया कि "मैं तुम्हारे लिए भेड़िये का एक बच्चा लाऊँगा।"

"भेड़िया? अरे नहीं! वो बहुत डरावने होते हैं और एक भेड़िये को पालतू बनाना बहुत मुश्किल है। इसकी जगह आप मेरे लिए कुछ और लाइएगा। लाएँगे ना?"

माँ ने कहा "मुझे लगता है कि तुम सचमुच में ऐसा करने का नहीं सोच रहे हो। वो बच्चों को काटेगा, नोचेगा और भाग जाएगा।

"हाय रे डरपोको! सही में तुम लोग भेड़ियों के छोटे बच्चे से डरते हो? यह बहुत बुरी बात है, क्योंकि भेड़िये तो शानदार ढंग से पालतू बनाए जा सकते है।"

और फिर उन्होंने हमें एक पालतू भेड़िये की कहानी सुनाई जो वास्तव में कभी हुआ करता था।

वह भेड़िया अपने मालिक को वफादार कुत्ते की तरह प्यार करता था, वह हर जगह अपने मालिक के पीछे-पीछे चलता। शत्रुओं से उसकी रक्षा करता, जब कभी भी वे यात्रा पर जाते भेड़िया अपने मालिक के घोड़ों की निगरानी करता। उसमें बस एक ही ख़राबी थी कि उसे शराब

पीना बहुत अच्छा लगता था। जैसे ही शराब की महक उसे लगती, वह सूँघता हुआ पूरे घर में घूमता जब तक कि उसे शराब की शीशी न मिल जाए। उस शीशी को वह जमीन पर लुढ़का-लुढ़काकर तोड़ देता और चप-चपकर शराब पी जाता था।

हम लोगों ने पूछा "क्या शराब पी लेने के बाद वह तिमका की तरह शोर मचाता था? प्लेटें तोड़ता था और झगड़ा करता था?

"नहीं, वो ऐसा कुछ भी नहीं करता था। वह रेंगते हुए किसी कोने में दुबक जाता और सो जाता।"

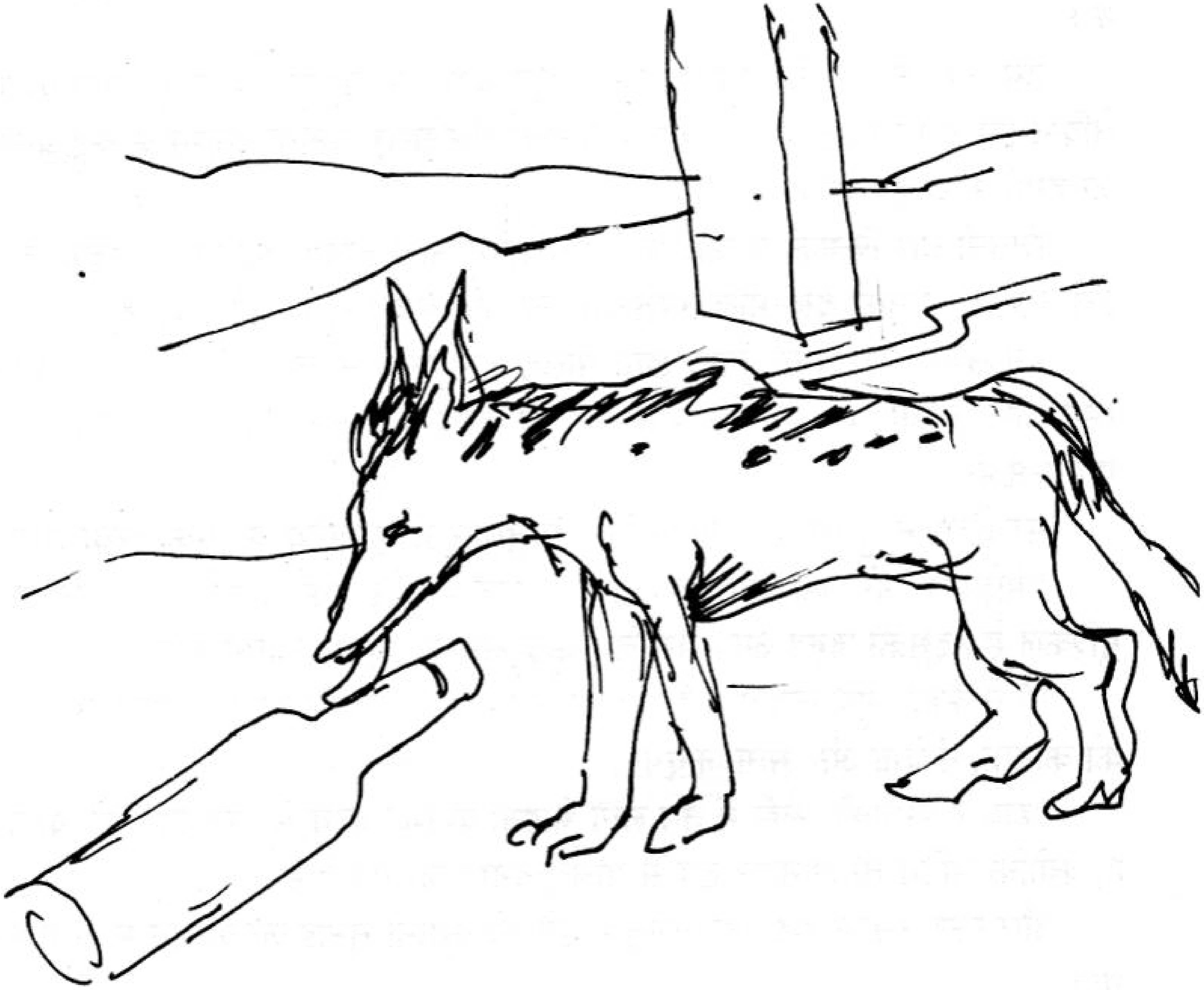

"अच्छा ऐसा क्या?"

"और जब वह सोकर उठता तो वह उतना ही चतुर और मेहनती रहता जैसा कि पहले।"

"आगे क्या हुआ?"

"आगे? हूँ, एक बाद उसके मालिक को बसों और रेलगाड़ियों में सफर कर बहुत दूर जाना था। उसके मालिक को नहीं पता था कि उसके काम की नई जगह कैसी होगी, क्या लोग उसे उसके भेड़िये के साथ रहते हुए काम देंगे? इसलिए उसने अपने भेड़िये को अपने एक दोस्त को देने का निश्चय किया। लेकिन भेड़िया उसके साथ नहीं रहना चाहता था। मजबूरी में मालिक ने उसे जंगल में वापस छोड़ दिया और घर लौट आया। लेकिन उसके घर लौटने से पहले ही भेड़िया भी घर लौट आया। कोई उपाय न देख मालिक ने उसे कुछ दवाई दी। दवाई पीते ही वह बेहोश हो गया। वह आदमी यात्रा पर निकल गया। कुछ दूर चलने के बाद मालिक देखता क्या है कि भेड़िया बग्घी के साथ-साथ लँगड़ाता हुआ चल रहा है। दरअसल हुआ यह कि वह दवाई की खुराक भेड़िए के लिए काफी कम थी जिससे जल्दी ही उसे होश आ गया। उसके बाद वह भेड़िया अपने मालिक के साथ उसी बग्गी में लगभग 5 मील की यात्रा कर रेलवे स्टेशन पहुँचा। फिर उन दोनों ने एक साथ ट्रेनों और बसों पर यात्रा की। मालिक ने सबको यह बताया कि वह उसका कुत्ता है। भेड़िया इतनी अच्छी तरह बरताव करता कि किसी को शक भी नहीं होता था। उस भेड़िये ने एक लम्बी जिन्दगी जी, और वे दोनों कभी अलग नहीं हुए।"

हम सब ने कहा :

"कितना शानदार! हमें भेड़िये की एक और कहानी सुनाइए।"

"कहानियाँ सुनाने का क्या फायदा? मैं तुम लोगों को भेड़िए का एक जीता-जागता बच्चा ला दूँगा। तुम खुद उसकी देखभाल करना। तब तुम मुझे उनकी मजेदार आदतों के बारे में बताओगे, न कि मुझसे पूछोगे।"

उस दिन के बाद मैं अपने पिता को हर रोज तंग करती थी : "मेरा भेड़िये का बच्चा कहाँ है?"

एक सुबह अभी मैं सो ही रही थी, कोई मेरे बिस्तर के पास आया और ऊँची आवाज़ में चिल्लाया,

"उठो! वे लोग उसे ले आए हैं!"

मुझे अच्छे से पता था कि वो क्या है। मैं कूदकर उठी, अपने कपड़े पहने और पशुशाला की ओर भागी। पिताजी ने पीछे से आवाज़ लगाई "लुहार घर की ओर जाओ। लुहारघर पशुशाला के आखिरी कोने पर था। वहाँ हम बेकार चीजें रखते थे। जैसे—जंग खाया लोहा, टूटे स्लेज या टूटी तशतरियाँ। उसका दरवाज़ा मजबूती से बन्द था। दरवाजे के सामने एक बड़ा पत्थर लगा था। मैंने खींचकर दरवाजा थोड़ा-सा खोला, लेकिन अन्दर बिल्कुल अँधेरा था। रोशनी न आने के कारण

मुझे कुछ दिखाई नहीं दे रहा था। अचानक भट्ठी में जहाँ लुहार आग जलाते थे, अँधेरे में चार चमकीली हरी आँखें दिखाई दीं। मैं घबराकर पीछे हटने लगी। मैंने कभी सोचा भी नहीं था कि भेड़िये के बच्चे से डर जाऊँगी। लेकिन... लेकिन इसकी तो चार आँखें हैं।

"अरे बेवकूफ! वहाँ पर वैसे दो हैं।"

दोनों बच्चे गुर्राए। जैसी आवाज़ें वे कर रहे थे मैंने अनुमान लगाया कि वे भट्ठी के अन्दर घुसे जा रहे हैं।

मुझे अच्छे से पता था कि किसी भी जानवर से दोस्ती करने का सबसे अच्छा तरीका है उसे कुछ खाने को देना। मैं दौड़ कर रसोइघर में गयी वहाँ से एक कटोरा दूध लिया और उसमें कुछ रोटियाँ भिगोकर वापस लुहारघर की ओर लौटी।

मैंने दरवाज़ा खुला छोड़ दिया ताकि अन्दर रोशनी जा सके। कटोरा जमीन पर रखकर मैं खुद अँधेरे में छुप गयी।

भेड़िये के बच्चे खाने के पास आने से डर रहे थे। काफ़ी समय गुज़र गया। लेकिन बच्चे भूखे थे और खाने से स्वादिष्ट महक भी आ रही थी। आखिरकार एक धूसर थूथुन बाहर की ओर झाँका। उसी क्षण दूसरा भी आया। बच्चे चारों पंजों पर चलते हुए बाहर आए, चारों तरफ देखा और रेंगते हुए कटोरे तक चले गए।

अब वे अपना डर भूल गए थे। अपने पंजों को फैलाकर वे कटोरे के पास खड़े हो गये और दोनों एक दूसरे को हिलाते हुए, धक्का देते हुए और रोकते हुए दूध से रोटियों के टुकड़े निकालने लगे। चूँकि उन्हें निगलना भी था और गुर्राना भी था इसलिए दोनों कटोरों में ही सरक जाते और खाँसते और इससे दूध में बुलबुले बनते।

खाने में वे दोनों इतने व्यस्त थे कि उनका ध्यान मुझ पर नहीं गया। मैं पंजों के बल चलती हुई उनके बहुत करीब आ गयी।

वे बच्चे बिल्कुल कुत्ते के बच्चों जैसे ही थे। उनके बड़े गोल-गोल पेट और बड़े पंजे थे। एक ही अन्तर था कि उनकी पूँछ पतली थी और उस पर बाल नहीं थे और उनके कान कड़े और नुकीले थे।

जल्दी ही कटोरे में कुछ भी नहीं बचा, लेकिन इन बच्चों का खाना अभी पूरा नहीं हुआ था। उनमें से एक अपनी चारों टाँग कटोरे में रखकर खड़ा हो गया और कटोरे को चाट-चाटकर साफ कर दिया। दूसरे ने अपना सिर उठाया और मुझे घूरने लगा और घूरता चला गया। मैंने देखा कि बेचारे को कुछ समझ नहीं आ रहा इसलिए हँसकर मैंने उसे थपथपाने की लिए हाथ बढ़ाया।

झटाक!

मुझे हाथ हटाने का बमुश्किल ही समय मिल पाया। और वह वापस लौट आया।

"कितना मतलबी है? क्या हुआ अगर वह बच्चा है, इसका मतलब वह किसी को अपने आप को थपथपाने नहीं देगा।"

"आखिर क्यों?" "वो लगभग मेरी उँगली काटने ही वाला था। मैंने क्या किया था? मैंने तो उन्हें थोड़ी दूध और रोटी दी। मैं उन्हें दिखा दूँगी!"

मैं अपनी दोस्ती इन बच्चों पर थोपना नहीं चाहती थी। पर सच बताऊँ, मुझे बुरा लगा था।

मैं जब बाहर आई बच्चों ने मुझे चारों ओर से घेर लिया।

"क्या तुमने भेड़िये को देखा? वे कैसे दिखते हैं?" मैंने आँख मारते हुए कहा "वे शानदार भेड़िये हैं, अभी से ही वे मेरे आदी हो गए हैं और मेरा कहा मानते हैं, अब मुझे सोचना है कि उनका नाम क्या रखें।"

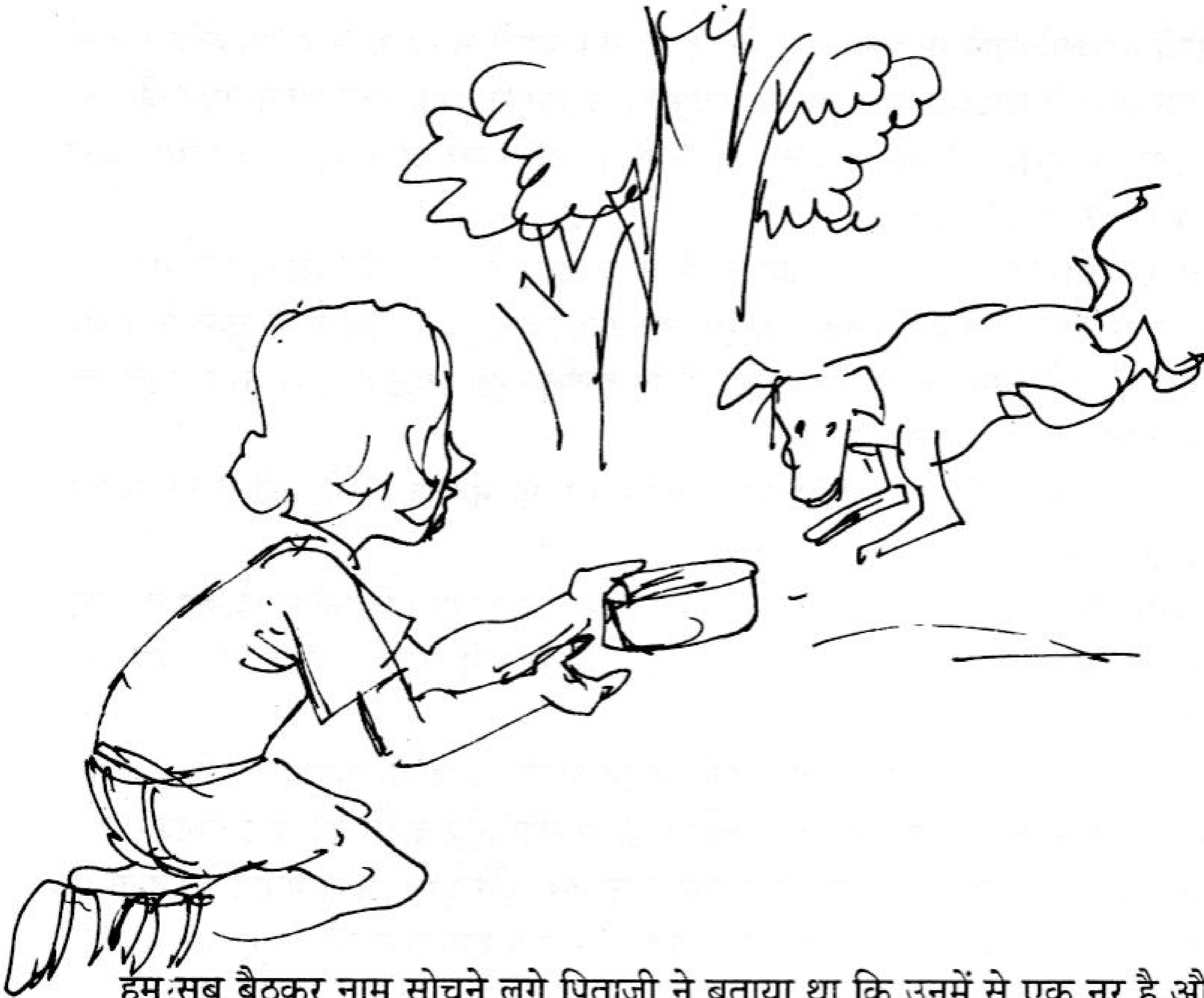

हम सब बैठकर नाम सोचने लगे पिताजी ने बताया था कि उनमें से एक नर है और एक मादा। इसलिए हमने उनका नाम रखा टॉमचिक और दियांका।

दोपहर को मैं उनके लिए थोड़ा और खाना लेकर आयी और इस बार पुचकारने वाली आवाज़ निकालकर उन्हें बुलाया। बच्चे रेंगते हुए बाहर आए और खाने लगे। मैंने दरवाजा चौड़ा खोल दिया। हमारे कुत्ते लुहारघर के अन्दर झाँकने लगे। मुझे डर था कहीं कुत्ते उन पर हमला न कर दें। इसलिए मैं उन्हें पीछे हटाने लगी। लेकिन भेड़िये के बच्चे अपनी टाँगों के बीच पूँछ करके और चेहरे पर बड़ी मुस्कान लिए कुत्ते के पास दौड़ते हुए पहुँच गये और कुत्ते की नाक चाटने की कोशिश करने लगे। फिर पीठ के बल लेटकर टाँगों को ऊपर कर मस्त होकर खेलने लगे, जैसे कि कोई कुत्ते का पिल्ला खेलता है। शायद उन्हें ये कुत्ते भेडिये से दिख रहे हों, और इसलिए वे खुश हो गए हों। कुत्ते गुर्राए उन्हें शायद इन बच्चों से ज्यादा खाने के कटोरे में दिलचस्पी थी। उन्होंने कटोरा सूँघा, जो कुछ बचा-खुचा था उसे खाया और वहाँ से चल दिए।

दोनों बच्चे कुत्तों को देखकर इतने खुश थे कि अपनी सारी झिझक, सारा डर भूलकर उनके पीछे चलने लगे। वे लुहारघर से काफी दूर निकल चुके थे। तभी उनकी नजर अपने चारों ओर के नज़ारे पर पड़ी, वे डर गए। यह जंगल की तरह बिल्कुल नहीं था।

उनकी नजर बग्घी पर पड़ी। वे डर गये और टाँगों को मोड़ते हुए वे झुक गए। उन्होंने थोड़ी देर इन्तजार किया लेकिन बग्घी नहीं हिली। तब उन्हें लगा कि वह उन पर हमला नहीं करने जा रही है। अब उन्हें हिम्मत आ गई थी।

इन बच्चों को अकेला छोड़कर कुत्ते कब का बरामदे में पहुँच गए थे। वे कूँ-कूँ कर रोते रहे। लेकिन कुत्तों का वापस आने का कोई इरादा नहीं था। तब बच्चे खुद आगे बढ़ने लगे।

जैसा कि तय था, इन बच्चों को अस्तबल को पार करना ही था। इसी अस्तबल के नीचे हमारी कुतिया ल्युट और उसके बच्चे रहते थे। ल्युट को लगा कि ये भेड़िये के बच्चे उसके बच्चों पर हमला करने जा रहे हैं। वह छलाँग लगाती हुई आई और टॉमचिक के गर्दन के फर को दाँतों से दबाकर उसे गुस्से से झकझोर दिया। हम दौड़ते हुए उन्हें बचाने आए।

ल्युट ने उसे छोड़ दिया। इसके बाद टॉमचिक और दियांका दौड़कर लुहारघर में घुस गए और रेंगते हुए भट्ठी के बहुत अन्दर चले गए और दुबक गए।

"बेचारा टॉमचिक! पहली बार बाहर घूमने निकला और देखो क्या हुआ उसके साथ!"

हम सभी अपराधबोध से लुहारघर के सामने इकट्ठा हो गए।

हम झाँक-झाँककर भट्ठी के नीचे देख रहे थे। बच्चों को प्यार से बुला रहे थे और उन्हें खाने को मजेदार-मजेदार चीजें दे रहे थे। जहाँ तक खाने का सवाल है, वे बड़े मजे से खा रहे थे। लेकिन बदले में हम पर गुर्रा रहे थे।

चाहे उनकी भावनाओं को कितना भी ठेस क्यों न पहुँची हो वे ज्यादा लम्बे समय तक भट्ठी के अन्दर नहीं रह सकते थे। सबसे पहले दियांका ने अपना सिर बाहर किया था। वह रेंगती हुई बाहर आई। थोड़ी देर बाहर बैठी और फिर भट्ठी के नीचे चली गई।

फिर टॉमचिक बाहर आया। उसके कान पर खून लगा था। सिर के फर अस्त-व्यस्त हो गए थे और उसकी आँखों के पास खरोंच थी। वह अपना सिर हिलाता रहा और अपने चोट खाए कान को जमीन की ओर झुकाता रहा। वहाँ भट्ठी के किनारे दोनों साथ-साथ बैठे थे दोनों दुखी और अकेलापन महसूस कर रहे थे और बाहर पशुशाला की ओर देख रहे थे।

दूसरा दिन भी वैसे ही गुजर गया। लेकिन जब मैं तीसरे दिन सुबह खाना लेकर पहुँची, दोनों दरवाजे पर मेरा इन्तजार कर रहे थे। हमने ग़ौर किया कि दियांका अपने भाई की तुलना में ज्यादा बहादुर है। वही हमारे बुलाने पर पहले बाहर आई थी। खाने के कटोरे को देखते ही वह अपने पंजों को हड़बड़ी में चाटना शुरू कर देती थी।

दियांका मेरे पीछे-पीछे पशुशाला तक आई। मेरे आँगन तक पहुँचने के थोड़ी देर बाद ही वह भी वहाँ आ गयी। टॉमचिक पीछे ही रह गया।

आँगन में हम सभी चाय पी रहे थे। सभी दियांका को देखकर मुस्कुराए और उसे खाने को अच्छी-अच्छी चीजें दी। जब स्वादिष्ट चीजों को खा-खाकर उसने अपनी स्वादेन्द्रियों को तृप्त कर लिया, तब वह वापस अपने भाई के पास चली गई। कायर टॉमचिक उसके थूथुन को सूँघने लगा और उसे समझ में आ गया कि दियांका को मजेदार चीजें खाने को मिली हैं। वह उसके पंजों को चाट रहा था और बार-बार उसे सूँघ रहा था। जबकी दियांका वहाँ खुश खड़ी थी। उसकी आँखें मोतियों की तरह चमक रही थीं। उसका पेट इतना ज्यादा भरा था कि खुशी में उसकी पूँछ हवा में खड़ी हो गई थी, और नीचे हो ही नहीं रही थी। ऐसा लग रहा था मानों कह रही हो, "देखो, बहादुर होना कितना अच्छा होता है।"

इसके बाद दोनों अपने चारों ओर की दुनिया देखने निकले, इस बार वे पहले की तरह डरे हुए नहीं लग रहे थे। वे पशुशाला के चारों ओर घूमे, घर का चक्कर काटा और फिर अपने आप को बागीचे में पाया।

मैं चुपचाप उनका पीछा कर रही थी। बागीचा ज़रूर ही उन्हें जंगल की याद दिला रहा होगा।

अपने अर्जित नए आत्मविश्वास से वे लम्बे लगने लगे। उनकी चाल में दृढ़ता आ गई और वे झाड़ियों में घुस गए। फिर वे बाहर आए, खुली जगह में थोड़ी देर खेले, फिर पेड़ों में गायब हो गए। वे सभी पेड़ों को सूँघते चल रहे थे। अन्त में जब वे बुरी तरह थक गए तो वे चेरी की झाड़ में सो गए।

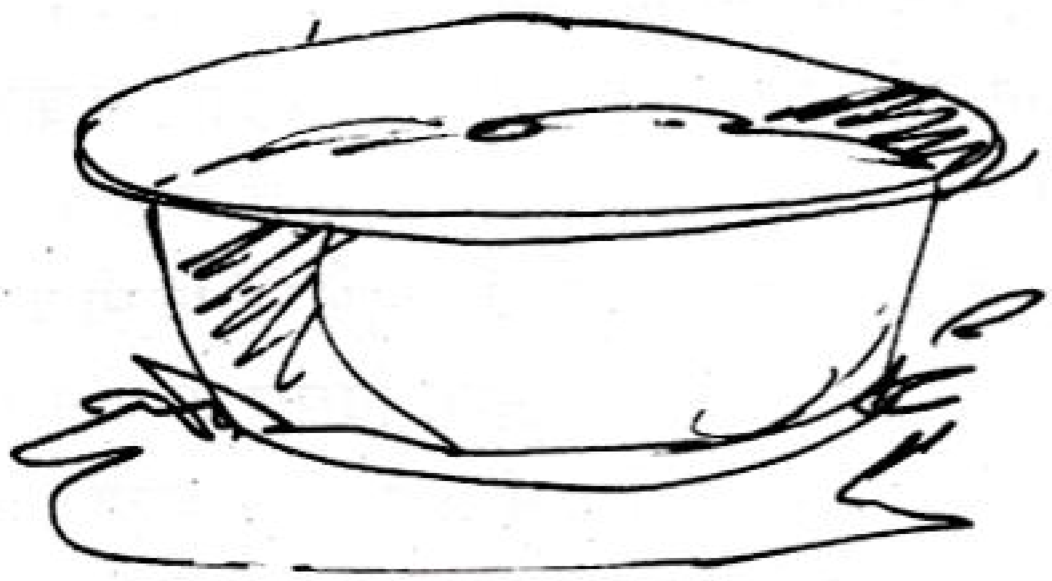

मैंने उन्हें वहाँ छोड़ दिया। रात में मैं उनका खाना वहीं लेकर गयी, लेकिन वे वहाँ नहीं थे। मैंने उन्हें बार-बार आवाज़ लगाई, अँधेरे में दूर तक देखने की कोशिश करने लगी कि क्या वे आ रहे हैं।

अन्त में मैंने कटोरे को घास पर रखा और उसके पास ही बैठकर एक सींक से खाने को मिलाने लगी।

वे कहाँ होंगे?

मुझे चिन्ता होने लगी तभी अपने सामने की झाड़ियों में मुझे दो थूथुन दिखे। हो न हो वे वहाँ काफी पहले आ गए होंगे और देख रहे होंगे कि मैं क्या करती हूँ। शायद वे मुझे अंधी समझ रहे होंगे क्योंकि वे दोनों ठीक मेरी नाक के नीचे झाड़ियों में थे। लेकिन किस तरह मैं उनकी आहट सुन पाती, हालाँकि दोनों अच्छे खासे मोटे-ताजे थे फिर भी चलते समय वे किसी तितली से भी कम आवाज़ करते थे।

जब वे खाना खा रहे थे, मैं वहीं घास पर पसर गयी और ऐसा दिखाने लगी कि मैं सो रही हूँ। हो सकता है कि यहाँ बागीचा था जहाँ उन्हें आजादी का अहसास हो रहा था, या हो न हो वो मेरे अभ्यस्त हो गए हों। चाहे जो कुछ भी हो इन बच्चों ने मेरे साथ बहुत बुरा बर्ताव किया, एक तो मेरे चेहरे पर साँस छोड़ने लगा। दियांका ने मेरा जूता चुरा लिया और उसे खींचकर झाड़ियों में ले गई। टॉमचिक उससे जूता छीनने को पीछे लपका। और जब मैंने उनसे उनका ये नया खिलौना छीना वह बड़ी बुरी हालत में पहुँच चुका था।

इसी तरह उछलते-कूदते वे सारा दिन बागीचे में ही बिताते और रात को भी वहीं रहते।

कई दिन बीत गए। इन बच्चों को अब पूरी आजादी मिल गई थी। मेरी बस एक ही चिन्ता थी, इनकी भूख को हमेशा शान्त रखना ताकि यह उनके दिमाग को परेशान न कर सके और वे भोजन के शिकार पर न निकल पड़े।

उन्हें पहली खुराक तड़के सुबह लगभग 5 बजे मिलती थी। चूँकि मैं किसी को जगाना नहीं चाहती थी इसलिए शाम को ही मैं उनका भोजन बनाकर अपने बिस्तर के पास रख लेती थी। सुबह, सूर्योदय के समय अपनी खिड़की से कूदकर बागीचे में जाती। उन बच्चों को ढूँढ़कर खाना खिलाती। उनके खा लेने के बाद मैं कटोरा उठाती, खिड़की से चढ़कर अपने कमरे में जाती और बिस्तर में घुसकर गहरी नींद सो जाती। दोनों बच्चे मुझे खिड़की के अन्दर जाने तक देखते रहते। अगर कभी मैं देर तक सो जाती तो ये बच्चे मेरी खिड़की तक आते अपने पिछले पंजों पर खड़े होकर अन्दर झाँकते और भेड़ियों वाली आवाज़ निकालते थे।

मेरा बिस्तर बिल्कुल खिड़की से लगा हुआ था। जैसे ही ये बच्चे देख लेते की मैं जाग गई हूँ तो खुशी से कूदने लगते, जल्दी ही वे पालतू बन गए। मुझे उनसे बहुत ज्यादा लगाव हो गया था। अगर कई घण्टों तक मैं उन्हें नहीं देखती तो मुझे उनकी याद आने लगती थी।

मैं घण्टों उनके साथ खेलती रहती थी। हम घास पर लोट-पोट होते बागीचे के चारों ओर दौड़ते। जब कभी भी मैं वहाँ पढ़ने जाती वे मुझे जल्दी ही ढूँढ़ निकालते। कुछ पल शान्ति से मेरे सामने बैठकर मुझे देखते। और फिर कुछ मिनट बाद ही मुझे तंग करने लगते।

एक बार दियांका मेरी पढ़ाई से बहुत ज्यादा ऊब गई। उसने एक लम्बी जम्हाई ली और मेरी किताब पर आ बैठी। मैंने उसे धक्का दिया, उसे एक ओर लुढ़का दिया और फिर उसे उसके पिछले पंजों पर घास के ऊपर खींचने लगी। इस बीच टॉमचिक मेरी किताब हथिया चुका था। और आनन्द ले लेकर उसके टुकड़े-टुकड़े कर रहा था।

इन बच्चों की एक मज़ेदार आदत थी। जब वे खाना खा लेते थे, उनके पेट फूल जाते थे और सख्त हो जाते थे। वे जमीन पर पड़ जाते, और अपने पेट को जमीन पर रगड़ते हुए रेंगते थे।

यह बहुत ही आश्चर्य जनक था। हालाँकि वे चिकित्सा और दवाइयों के बारे में कुछ नहीं जानते थे लेकिन उन्हें पता था कि मालिश बहुत अच्छी चीज़ होती है।

एक बार मैं बागीचे में यूँ ही घूम रही थी। मैंने सोचा क्यों ना थोड़े आलूबुखारे खाए जाएँ। चूँकि मैं नीचे से आलूबुखारों तक नहीं पहुँच पा रही थी, इसलिए मैं पेड़ पर चढ़ गई और डालियों को हिलाने लगी। एक पका हुआ आलूबुखारा धप की आवाज़ के साथ जमीन पर गिरा। जब मुझे लगा कि मैंने अपने खाने भर आलूबुखारे गिरा लिये हैं, तो मैं नीचे उतरी। नीचे मैंने एक भी आलूबुखारा नहीं पाया। मुझे आश्चर्य हुआ, मैं फिर पेड़ पर चढ़ी डालियों को हिलाया। जब मैं नीचे आई तो पाया दियांका और टॉमचिक मेरे सारे आलूबुखारों को चपड़-चपड़कर खा रहे हैं।

इस तरह मुझे पता चला कि उन्हें फल भी पसन्द हैं। यहाँ तक कि उन्हें पता था कि क्या स्वादिष्ट है और क्या नहीं। क्योंकि वे हमेशा पके हुए फल ही खाते थे।

इसके बाद मैं उन्हें अक्सर ही चीकू, आलूबुखारा और सेब की टहनियों को हिलाकर ये फल उन्हें खाने को देती।

दियांका और टॉमचिक को बागीचे के एक-एक कोने के बारे में पता था। लेकिन वे कभी भी घर तक नहीं आते। क्योंकि उन्हें दूसरों का साथ पसन्द नहीं था। मैं ही एक अकेली इन्सान थी जिसे वे स्वीकार करते थे और प्यार करते थे। वे मेरा स्वागत करने आते। मुझे नजदीक से सूँघते, मेरे ऊपर कूदते, और अपने पंजे मेरे कन्धों पर रखते और मेरा चेहरा चाटते।

एक बार मैंने सबके बीच हाँका कि वो बच्चे मेरी आवाज़ पहचानते हैं। कइयों की आवाज़ में मेरी आवाज़ को पहचान जाएँगे।

"यह सही नहीं है। वो तुम्हारी आवाज़ नहीं पहचान सकते! उन्हें बस खाना चाहिए। अगर वे भूखे हैं तो इससे उन्हें कोई मतलब नहीं कि कौन उनको खाना देता है।

मैंने कहा, "नहीं ऐसा नहीं होता है। चलो कोशिश करते हैं और देखते हैं।"

यह प्रयोग देखने आठ बच्चे आए। यहाँ तक कि बड़ों को भी जिज्ञासा होने लगी।

सभी बागीचे के द्वार पर जमा हो गए।

मेरी बहन ने कहा, "रुको! मुझे खाने का कटोरा दो।"

वह कटोरा लेकर बागीचे में गई। बगीचे में वह दोनों को आवाज़े लगाने लगी। काफी देर वह आवाज़ लगाती रही कोई फायदा नहीं हुआ। कोई भी बाहर नहीं आया वह निराश होकर वापस आ गई। फिर, दूसरे ने अपना भाग्य आजमाया और फिर तीसरे ने। सभी को एक मौका दिया गया। आखिर में मैंने कहा :

"मुझे कटोरे की भी जरूरत नहीं। वो बिना इसके भी मेरे पास आएँगे।" सच बताऊँ, मैं जितने विश्वास के साथ कह रही थी, अन्दर ही अन्दर मुझे उतना विश्वास नहीं था। क्या होगा अगर वे नहीं आएँगे?

"दियांका! टॉमचिक", मैंने आवाज़ लगाई मेरा दिल जोरों से धड़क रहा था।

तब सभी ने उन दोनों को भागकर मेरे पास आते देखा। वे तुरन्त आए। वो मेरे पुकारने का ही इन्तजार कर रहे थे।

"देखो! तुम कहते हो कि ये मेरी आवाज़ नहीं पहचानते!"

गर्मियाँ खत्म हो रही थीं। दोनों बच्चे खासा बड़े हो गए थे। कुत्ते भी काफी सम्मान देने वाले हो गए थे। जब दियांका और टॉमचिक बच्चे थे, तब ये कुत्ते इन पर थोड़ा भी ध्यान नहीं देते थे। लेकिन अब चीजे बदल गई थीं। कुत्ते अक्सर मेरे पालतू जानवरों से मिलने आते थे।

एक दिन कुत्ते दौड़ते हुए बागीचे में आए।

वो पेड़ों के चारों ओर भागते, भौंकते, खुशी से चिल्लाते और जमीन पर लोट-पोट होते। उस दिन खिली हुई सुहानी सुबह थी। जमीन अभी नम थी और जमीन पर गिरे पत्ते कुत्तों को इतना ललचा रहे थे कि वे उनमें अपनी नाक घुसाए बिना नहीं रह पाए। पत्तों के ढेर में वे घुसते चले जा रहे थे और रुकने का नाम ही नहीं ले रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो अभी तक उन्हें किसी ने बाँधे रखा था और बसन्त ने आकर उन्हें छुड़ा दिया है। भेड़िए के बच्चे भी कुत्तों को देखकर बहुत खुश हो गए और जल्दी ही उनके साथ खेलने लगे। दियांका ने टॉमचिक को अपने पंजों से एक जोरदार धक्का दिया, उसे एक ओर धकेल दिया और अपने पंजों पर झुककर

इन्तजार करने लगी मानो कहना चाहती हो : "चलो टॉमचिक इन्हें दिखा दें कि भेड़िए के बच्चे कैसे खेलते हैं!"

और बस हुल्लड़बाजी शुरू हो गई। कुछ ही समय में दियांका ज़ागराइ के साथ दौड़ लगाने लगी, और ल्यूट टॉमचिक की पूँछ खींच रहा था। ज़गराइ ने जब दियांका का पीछा करते हुए उसे धक्का मारकर गिरा दिया तब भी वह नाराज़ नहीं हुई। वो कूदकर खड़ी हुई, अपने आप को झाड़ा और पहले से कहीं ज्यादा जोश के साथ खेल को जारी रखा।

उस दिन के बाद, हर रोज़ कुत्ते बगीचे में आते। कभी-कभार दियांका और टॉमचिक उन्हें पशुशाला तक छोड़ने भी आते। इस तरह भेड़िए के बच्चे और कुत्ते सच्चे दोस्त बन गए।

ऐसा बहुत ही कम ही होता है, लेकिन एक बार अगर भेड़िया कुत्ते से दोस्ती कर लेता है तो यह कभी न खत्म होने वाली दोस्ती होती है।

मैं तुम्हें एक सच्ची कहानी सुनाऊँगी। यह कहानी है उत्तर में रहने वाले याकुत और उसकी कुतिया की। वह अपने रेण्डियरों के साथ उत्तर में एक कैम्प बना कर रह रहा था। सर्दियों के दिन थे। मीलों तक एक भी घर या कुत्ते नहीं थे। यह फरों वाली कुतिया उसके रेण्डियरों के झुण्ड की रक्षा करती थी। इसी बीच उस आदमी ने ध्यान देना शुरू किया कि उसकी कुतिया सूखी मछलियों को जंगल ले जाती है। उसने एक बार उसका पीछा किया लेकिन नहीं जान पाया कि माजरा क्या है? हर रोज़ कुतिया कुछ मछलियाँ ले जाती थी। वह हमेशा सोचता कि "वह उसे खुद क्यों नहीं खा लेती? आख़िर उसे लेकर जाती कहाँ है?" उसी वसन्त में कुतिया ने कई प्यारे-प्यारे पिल्लों को जन्म दिया। वह आदमी बहुत ही खुश हुआ, क्योंकि याकुत रेण्डियर पालने वालों के घरों में कुत्तों का हमेशा स्वागत किया जाता है और उस समय उत्तर में आप एक तन्दुरुस्त कुत्ते के बदले एक रेण्डियर पा सकते थे। वह देख रहा था कि ये पिल्ले बड़े ही स्वस्थ्य हैं। वे मजबूत और गठीले थे और बड़ी तेज़ी से बड़े हो रहे थे। जल्द ही उस आदमी को अपने गर्मियों के आवास में लौटना था। उसने अपनी चीज़ों को बाँधा, उन्हें स्लेज पर लादा और जाने को तैयार हो गया। कुत्ते और वे छोटे-छोटे पिल्ले लुढ़कते-पुढ़कते उसके पीछे चलने लगे। उनका रास्ता जंगलों से होकर गुजरता था। अचानक वह आदमी जब पीछे मुड़ा तो उसने इस कुत्ते के परिवार के साथ एक भेड़िये को चलते देखा। वो बन्दूक उठाकर उसे मारने ही वाला था कि एक ख्याल उसके दिमाग में आया। हो न हो यह भेड़िया ही इन पिल्लों का पिता है और पूरी सर्दियाँ कुतिया ने इसके लिए ही मछलियाँ चुराई हों। उसने बन्दूक रख दिया और वह भेड़िया उनके साथ आ गया।

सर्दियाँ आते-आते दियांका और टॉमचिक पूरी तरह बड़े हो गए थे। उनके फर घने और लम्बे थे, और गालों पर लम्बे बाल थे उनकी पूँछें फरदार और मुलायम हो गई थीं। अब वे किसी मजबूत कुत्ते की तरह बड़े हो गये थे।

पहली बर्फबारी के साथ ही उन लोगों ने अपने लिए माँद बना ली। माँद इतनी वड़ी थी कि कभी-कभी कुत्ते भी रेंग कर उसमें चले जाते और भेड़ियों के साथ सो जाते। कुत्तों के साथ उनकी दोस्ती का बुरा असर भी पड़ा था। कुत्तों ने उन्हें मुर्गियाँ चुराना सिखा दिया था। चूँकि इस चोरी के लिए उन्हें हमेशा ही सजा मिलती थी, इसलिए अब वे बाड़ा फाँदकर पड़ोसियों की मुर्गियाँ चुराने लगे। एक दिन हमारा पड़ोसी हमारे पिताजी से मिलने आया। वह अपने हाथ में मरी हुई बत्तख लिए था। उसने कहा हमारे भेड़िये के बच्चों ने उसे मारा था और इसलिए वो उसकी कीमत माँग रहा था। जाते-जाते उसने कहा "और मैं तुम्हें चेतावनी देता हूँ, अगर मैंने उन्हें दुबारा अपने बाड़े में देखा तो तुम पछताओगे।"

उस दिन से दियांका और टॉमचिक को जंजीरों से बाँध दिया गया। अब उनके लिए जिन्दगी उतनी आजाद और आसान नहीं रह गई थी।

एक सुबह हमारे बाड़े में एक आर्गन बजाने वाला आया। वो वॉल्ट्स* की धुन बजाने लगा। अचानक, खलिहान के पीछे से एक मोटी आवाज़ उस धुन से सुर मिलाने लगी, और कुछ देर बाद हमारे भेड़िये आर्गन बजाने वालों के साथ गा रहे थे। जैसे ही उन लोगों ने गाना शुरू किया हमारे कुत्ते हर जगह से रेंगते हुए वहाँ चले आए उन्होंने भी सिर ऊँचा किया और हर सुर पर हुआने लगे। इस कनसर्ट को देखकर आर्गन बजाने वाले को इतनी जोर की हँसी आई कि उसके गालों पर आँसू लुढ़क आए। अब वो ध्यान नहीं दे रहा था कि वो क्या बजा रहा है बस उस बेसुरे कोरस को संगीत देता रहा। हमें कोई संगीत नहीं सुनाई दे रहा था बस यही बेसुरा कोरस (समूह गीत) सुनाई दे रहा था।

अब ये बच्चे जंजीरों से बँधे होते थे। उनके जैसे आजादी को प्यार करने वाले जानवरों को जंजीरों में बाँधा जाना कोई खुशी की बात नहीं थी। वे सारा दिन हुआ-हुआ करते रहते थे और रात होने के साथ यह दुखभरी आवाज़ में बदल जाती।

हमने देखा कि हमारे कुत्ते अब भेड़ियों की तरह हुहुआने लगे थे और भेड़िए कुत्तों की तरह भौंकने लगे थें।

पहले-पहल पिताजी इस बात को मानने को तैयार नहीं हो रहे थे कि कुत्ते भेड़ियों के और भेड़िये कुत्ते की आवाज में बोलना सीख गये हैं। लेकिन जब मैंने उन्हें दियांका को भौंकते हुए सुनाया तो वो हक्के-बक्के रह गए।

इन भेड़ियों को खुश करने के लिए हम उन्हें शहर के बाहर घनी झाड़ियों और हरियाली में टहलाने ले जाया करते थे। ये भेड़िये बड़े मजे से दौड़ लगाया करते थे। लेकिन उनके लिए हम बहुत ही खराब साथी थे। उन्हें पूरी आजादी मिलती और वे खुशी में दौड़ते और हम उतनी ही जल्दी थक जाते।

उन्हें सही शारीरिक व्यायाम नहीं मिल पाता था; इसलिए वे बेचैन रहते थे। जब भी उन्हें थोड़ी-सी आजादी मिलती वे अपनी जंजीरे तोड़कर भागना चाहते थे। आखिरकार उन्होंने जंजीर खोलना सीख लिया। किसी तरह वो जंजीर के ताले में लगे स्प्रिंग को पंजों से दबाते और वह खुल जाता और जब वे आजाद हो जाते तो सभी लोग मेरे पास भागे आते, क्योंकि वे दोनों केवल मेरी बात ही मानते थे।

अक्सर ही वे मेरे पास आते और कहते, "चलो भेड़ियों की बहन (ऐसे ही वे मुझे बुलाते)। जाओ अपने प्यारों को बाँध दो!"

नए साल के ठीक पहले कोई चिल्लाया, "टॉमचिक जंजीर खोलकर पड़ोसी के बागीचे में

चला गया है!'' मैं बिना अपनी टोपी और कोट लिए भागी और बाग से जाने वाले छोटे रास्ते से दौड़ी। सर्दियों में बागीचे में रास्ता नहीं रह जाता। केवल बर्फ की मोटी परत वह भी घुटनों तक ऊँची।

मैं बाड़े से ही देख सकती थी कि टॉमचिक पड़ोसी के बागीचे के बीच खड़ा है; पड़ोसी अपने घर से बन्दूक लिए बाहर आ रहा था।

दूर से ही मैं चिल्लाई, ''रुको! रुक जाओ! मैं आ रही हूँ! मैं उसे बाँध दूँगी! गोली मत. ..'' मेरी आवाज़ गले में ही दब गई जब मैंने देखा कि पड़ोसी उसे मारने के लिए बन्दूक तान चुका है। टॉमचिक निर्जीव-सा जमीन पर गिर गया।

मैं पड़ोसी की ओर भागी। जंजीर उसके ऊपर फेंका और उसका कोट पकड़ कर बार-बार दुहराने लगी, ''देखो तुमने क्या किया! देखो तुमने क्या किया!''

मैंने टॉमचिक का निर्जीव सिर अपनी गोद में लिया और वहीं बर्फ पर बैठकर जोर-जोर से रोने लगी। मुझे कुछ याद नहीं कि मैं कैसे घर आई और कैसे टॉमचिक को घर लाया गया। शाम होते-होते मैं बुरी तरह बीमार पड़ गई और मुझे तेज बुखार हो गया।

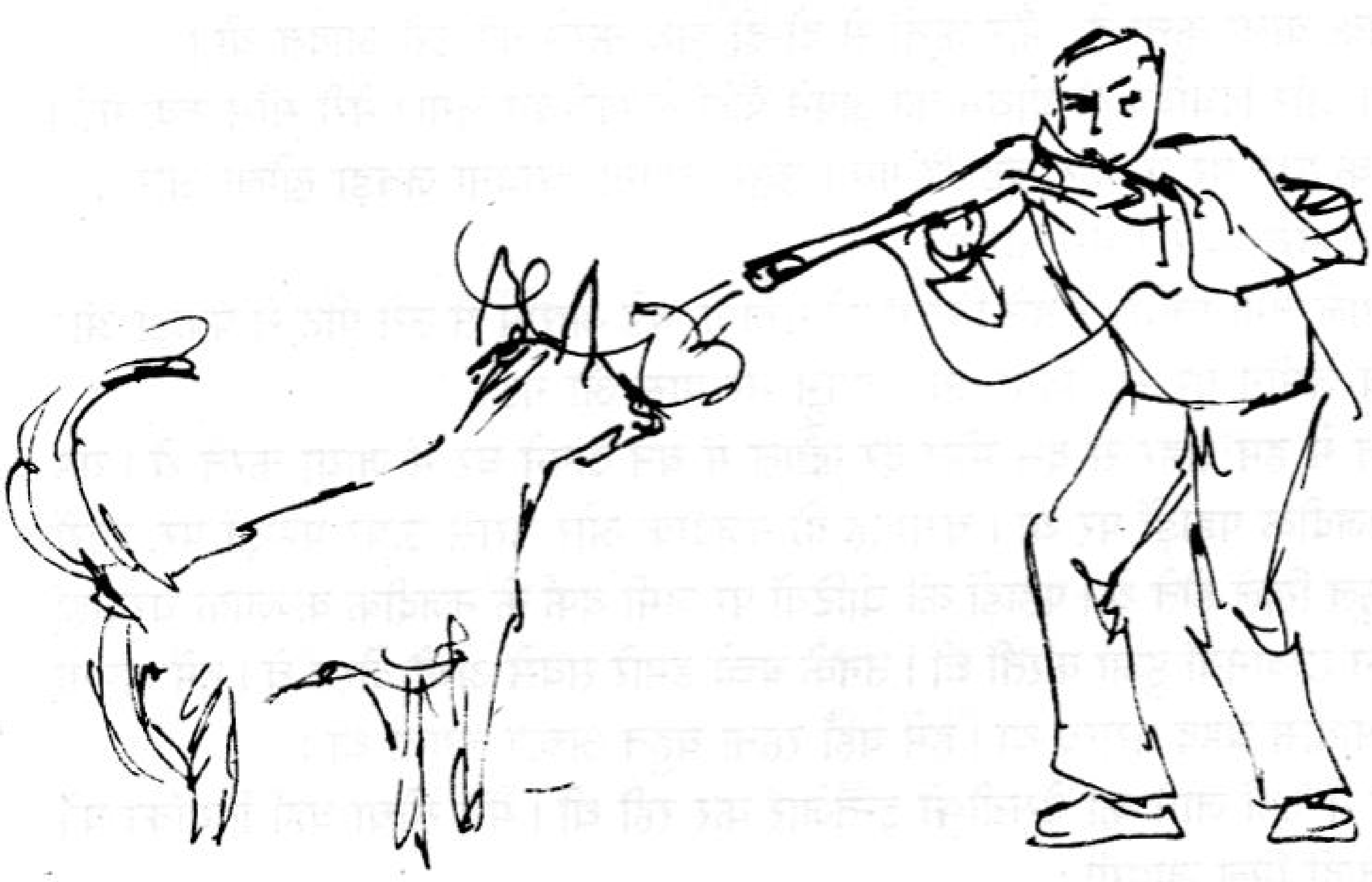

अगले दो महीने मैं बीमार रही।

दियांका अब बिल्कुल अकेली थी। जब कभी भी लोग मेरे लिए दलिया या दवाई लाते तो मैं उनसे पूछती, ‘‘क्या तुमने दियांका को खाना खिला दिया? क्या वो सो रही है?’’

‘‘दियांका बहुत मजेदार हो गई है! वो बिल्कुल भेड़ियों जितना खाने लगी है और शायद टॉमचिक को भूल भी गई है।’’

जैसे ही मुझे कुछ बेहतर महसूस होने लगा मैंने उनसे दियांका को मेरे पास लाने को कहा। एक विशालकाय मादा-भेड़िया अपनी जंजीर घसीटती हुई मेरे कमरे में आई। मैं तो उसे पहचान भी नहीं पा रही थी। वो बहुत डरावनी दिख रही थी। हालाँकि मैं डरावनी नहीं दिख रही थी लेकिन वो भी मुझे नहीं पहचान पा रही थी। मेरे बाल फूल गए थे और मैं बुरी तरह पतली हो गई थी।

दियांका हर चीज आश्चर्य से सूँघ रही थी। मैंने उसे आवाज़ लगाई, ‘‘दियांका! दियांका!’’

उसने तुरन्त मेरी आवाज़ पहचान ली और दौड़कर मेरे पास आ गई। जैसे ही मैंने उसे थपथपाया उसने अपनी आँखें बन्द कर लीं और खुशी में अपनी पूँछ हिलाने लगी।

एक मोटा बिल्ला मेरे बिस्तर पर बैठा था। उसे दियांका पसन्द नहीं आई। उसे लगा यह कोई लम्बी नाक वाला कुत्ता है, और कुत्तों से दो-दो हाथ करने की उसे आदत थी।

वो गुर्राया और दियांका के थोथुन को अपने पँजों से खरोचने लगा! मेरी साँस रुक गई।

दियांका के पीठ पर के फर खड़े हो गए। उसने अपना डरावना जबड़ा खोला और...

‘‘दियांका! मेरी प्यारी! मेरी अच्छी!’’

मैंने उसे गले लगा लिया। उसने बिल्ली को उठाया, बड़े आराम से उसे पीठ से पकड़ा और बिस्तर से नीचे जमीन पर रख दिया और वापस मेरे पास आ गई।

हर वसन्त में हम शहर से दस मील दूर जंगल में बने अपने घर में जाया करते थे। यह घर झरने के नजदीक पहाड़ों पर था। चरागाह के नजदीक और उससे ऊपर पहाड़ों पर, चारों ओर फूल ही फूल खिले होते थे। पहाड़ों की चोटियों पर जमी बर्फ के नजदीक कज्जाक चरवाहों की ग्रीष्मकालीन छावनियाँ हुआ करतीं थीं। उनके बच्चे हमारे सबसे अच्छे दोस्त थे। हमें अपना ग्रीष्मकालीन आवास बेहद पसन्द था। हमें वहाँ रहना बहुत अच्छा लगता था।

उस साल मैं वहाँ जाने का बेसब्री से इन्तजार कर रही थी। मैंने सोचा वहाँ दियांका को जंजीरों से आजादी मिल जाएगी।

लेकिन मैं गलत थी। वहाँ पास ही एक गाँव था। गाँव के लोग खुले घूमते भेड़िये को

देखकर डर जाते थे।

एक दिन दियांका ने अपने आप को जंजीरों से आजाद कर लिया और गाँव की ओर भागी। कुछ अस्पष्ट-सी आवाज़ें आने लगीं और कोई गुस्से में दियांका पर आक्रमण करने लगा। वो निश्चय ही एक साहसी कुत्ता था। दियांका उस पर झपटी। अगले ही पल कुत्ता मर चुका था। कुछ लोग हाथों में छड़ी और चाबुक लिए उसकी ओर आने लगे। जब दियांका को लगा कि कुछ बुरा होने जा रहा है, वो मेरे पीछे आकर खड़ी हो गई; मानो कह रही हो, ''मैं यहाँ सुरक्षित हूँ, अब मुझे कोई भी छू नहीं सकता!''

ये सही ही था। मैं किसी को उसे तकलीफ नहीं पहुँचाने देती। लेकिन वे चिल्लाए और डाँटने लगे। फिर वे मेरे माता-पिता से शिकायत करने गए।

कई महीने बीत गए। पिताजी हमेशा मुझे समझाते कि क्या दियांका सारी जिन्दगी जंजीरों में बँधी-बँधी बिता देगी। लेकिन मुझे इसे समझने में लम्बा समय लगा।

उन्होंने कहा, ''अगर तुम्हें जंजीरों से बाँध दिया जाए तब तुम्हें मालूम पड़ेगा कि बँधे रहना कितना बुरा लगता है।'' मैंने इसे आजमाने का सोचा। मैं दियांका के साथ बैठ गई और सारा दिन वहीं उसके साथ-साथ बिताया और तब मैं पिताजी की बात मान गई। एक सुबह मैंने उसे ढेर सारा नाश्ता दिया। पिताजी ने घोड़े पर जीन चढ़ाई और दियांका की जंजीर हाथ में ली। दियांका उनके पीछे-पीछे खुशी से दौड़ गई।

वो दियांका को दूर घने जंगलों में ले गए। वहाँ उसकी जंजीर खोल दी और अगले ही पल वो गायब हो गई।

पिताजी ने सोचा, ''यह सही ही है, चाहे तुम भेड़िये को कितना ही खिलाओ, उसकी एक आँख हमेशा जंगल पर लगी रहती है।''

उन्होंने दियांका के चले जाने तक इन्तजार किया और फिर घर की ओर चले। वो शाम से पहले नहीं लौटे।

मैंने पूछा, ''क्या वो चली गई?''

''हाँ! और यहाँ तक की वो अपना प्यार कहना भी भूल गई।'' पिताजी ने जवाब दिया।

मैंने कहा, ''ठीक है, मुझे इससे कोई मतलब नहीं, मैं खुश हूँ।'' और मैंने अपना सिर लटका लिया, क्योंकि यह सोचकर ही बहुत दुख हो रहा था कि मेरी दोस्त आसानी से मुझे छोड़कर चली गई है।

तभी कुछ ठण्डी-सी चीज ने मुझे छुआ, मैं पीछे मुड़ी। वो दियांका थी। वो पिताजी के

पीछे-पीछे घर चली आई थी।

हमने उसे भेजने का एक और प्रयास किया। इस बार पिताजी ने उसे बहुत दूर जंगल में छोड़ा और ठीक उल्टा रास्ता पकड़कर, पहाड़ को पार करते हुए घर लौटे।

चार दिन बीत गए। दियांका फिर वापस आ गई—थकी, भूखी और खरोचों से भरी हुई। ऐसा लगता था कि वो भटक गई थी, पर किसी तरह घर का रास्ता ढूँढ़ निकाला।

दूसरे शहर नहीं जाना होता तो पता नहीं सब कब तक चलता। अब हमारे सामने समस्या थी कि हम अपने पालतू जानवरों का क्या करें।

स्वाभाविक था कि मैं सबसे ज्यादा दियांका के लिए परेशान थी। मैं लगातार उसी आदमी के बारे में सोचती रही जिसकी कहानी पिताजी ने सुनाई थी कि कैसे उसने अपने भेड़िये को नींद की दवा दे दी थी। मैंने कुछ ऐसे घर ढूँढ़ने की पूरी कोशिश की जहाँ दियांका की अच्छी देखभाल हो सके और वो वैसे ही खुश रह सके जैसे वो हमारे साथ थी।

और अचानक सब कुछ इतना अच्छा हो गया कि जैसे हमने कभी सोचा भी नहीं था।

हमारे गाँव में और उसके चारों तरफ के इलाके में पिछले छह महीने में बहुत चोरियाँ हो रहीं थीं। चोर दियांका, घोड़ों और गायों को चुराकर भाग जाते, और कोई नहीं जान पाता कि चोरों ने उनका क्या किया। कई शानदार पुलिस के कुत्ते वहाँ लाए गए। एक जासूस को इन चोरों का पता लगाने की जिम्मेदारी सौंपी गई।

मैंने और पिताजी ने इन कुत्तों को देखा था। उनके लिए एक बड़ा मैदान था, जिसमें ढेर सारे पेड़ लगे थे। एक-एक कुत्ते को अपना अलग घर मिला हुआ था। उन्हें अच्छा भोजन मिलता था। और किसी को उन्हें तंग करने की इज़ाज़त नहीं थी।

ये कुत्ते बहुत ज्यादा भेड़ियों के समान दिखते थे। मेरे दिमाग में अचानक एक तरकीब सूझी, क्यों न हम उनसे दियांका को ले लेने को कहें? मैंने यह बात पिताजी को कही और उन्होंने वहाँ के प्रमुख से बात की।

उस आदमी ने आश्चर्य से कहा, ''भेड़िया? वो भी पालतू? ओह! ये मेरी जिन्दगी का सपना था! उसे अभी लेकर आओ। इसकी खोज में ही मैं हमेशा से था!''

दियांका को एक पुलिस कुत्ते के साथ रखा गया जिसका नाम वुल्फ था, गाँव छोड़ने से पहले मैं हर दिन दियांका को देखने जाती। वो खुश और तन्दुरुस्त हो गई थी। मुझसे बहुत प्यार से मिलती। अब मैं निश्चिन्त थी और आराम से जा सकती थी क्योंकि अब मुझे पता था कि दियांका खुश है।

• • •

अनुराग ट्रस्ट
लखनऊ